International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(6): 156-158

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2023; 9(6): 156-158
© 2023 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 13-10-2023
Accepted: 15-11-2023

**हितेश शर्मा**
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, हिमाचल प्रदेश, भारत।

**डॉ0 लता देवी**
सहायकाचार्य, संस्कृत विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, हिमाचल प्रदेश, भारत।

**Corresponding Author:**
**हितेश शर्मा**
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, हिमाचल प्रदेश, भारत।

# बोधिचर्यावतार में वर्णित शील पारमिता का बोधिसत्त्व की साधना में स्थान तथा वर्तमान समय में शील की प्रासंगिकता

**हितेश शर्मा, डॉ0 लता देवी**

**सारांश**
इस संसार में प्रत्येक स्थान पर मानव के द्वारा की हुई हिंसा का ही द्रर्शन होता हैं मानव कुछ भी करे वह केवल स्वार्थ पराभूत करने के लिये ही दिखाई देता है। मानव का प्रत्येक कार्य स्वयं से आगे नही जा पाता। अपने स्वार्थ साधन में कई बार प्राणी हिंसा इत्यादि को भी अपना लेता है जिससे उसका चित्त पाप का भागीदार होता है। इसी पाप से बचने के लिये बोधिचर्यावतार में शील पारमिता का महत्त्व बताया गया है। इसलिये सर्वप्रथम् शील पारमिता का अर्थ तथा उद्देश्य, बोधिसत्त्व का शील पारमिता की साधना के लिये अग्रसर होना, शील पारमिता द्वारा चित्त की रक्षा, वर्तमान युग में शील का ह्रास, आधुनिक समय में शील पारमिता की उपयोगिता तथा अंत में निष्कर्ष दिया जाएगा।

**कूटशब्द :** शील की प्रासंगिकता, बोधिचर्यावतार, सर्वप्रथम् शील पारमिता, बोधिसत्त्व की साधना

## प्रस्तावना
महायान के अन्तर्गत बुद्धत्व प्राप्ति की साधना मे बोधिसत्त्व षट् पारमिताओं की साधना करता है। षट् पारमिताओं में क्रमशः दान, शील, क्षान्ति, वीर्य, ध्यान तथा प्रज्ञा पारमिता हैं। इन सभी पारमिताओं का अलग–अलग महत्त्व है। जहाँ दान पारमिता में साधक अपना सब–कुछ सत्त्वों को दान कर देता है। वहीं शील पारमिता में साधक अपने चित्त को रोकता है, जिससे उसका चित्त पाप आदि कर्मों में प्रवृत न हो सके। क्षान्ति पारमिता में वह क्षमा के गुण को आत्मसात करता है, तथा वीर्य पारमिता में पूर्ण उत्साह के साथ बोधि विरोधी समस्त तत्त्वों में वह समस्त सांसारिक तत्त्वों, क्लेशों, कुपथ से अपना चित्त हटाकर बोधि में लगाता है तथा एकान्तवास की तरफ अग्रसर होता है। प्रज्ञा पारमिता में वह समस्त पदार्थों की निःस्वभावता को जानकर, शून्यवाद में स्थित होकर अपनी प्रज्ञा पारमिता को पूर्ण करता है। इन सभी पारमिताओं में शील एक महान् पारमिता है, जिसके आधार के बिना बोधि रूपी भवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। बोधिसत्त्व शील पारमिता द्वारा समस्त अकुशल धर्मों से अपने चित्त को नियंत्रित करता है। जिससे बोधिसत्त्व पापों से अपना मन हटाकर पुण्य की ओर अग्रसर होता है।

इसलिये सर्वप्रथम् शील पारमिता का अर्थ तथा उद्देश्य, बोधिसत्त्व का शील पारमिता की साधना के लिये अग्रसर होना, शील पारमिता द्वारा चित्त की रक्षा, वर्तमान युग में शील का ह्रास, आधुनिक समय में शील पारमिता की उपयोगिता तथा अंत में निष्कर्ष दिया जाएगा।

## शील पारमिता का अर्थ तथा उद्देश्य
बोधिसत्त्व जितनी भी पारमिताओं की साधना करता है उन सभी पारमिताओं में चित्त की प्रधानता रहती है। सभी पारमितायें चित्त से भिन्न नहीं है। वस्तुतः चित्त सात प्रकार के कहे गये हैं। संक्लेश, स्त्रोतापन्न, संकृदागामी, अनागामी, अर्हत्, प्रत्येकबुद्ध तथा सम्यक् संबुद्ध चित्त।[1] लंकावतारसूत्र के अनुसार केवल चित्त ही चित्त में परिवर्तित होता है, चित्त ही विमुक्त होता है, चित्त ही उत्पन्न होता है और चित्त का ही निरोध होता है।[2] यह संसार गुण तथा दोषों का संग्रह–मात्र है। जिस प्रकार चित्त में यह गुण है कि उसे एकाग्र कर प्रज्ञा की प्राप्ति की जा सकती है। ठीक उसी प्रकार उसमें यह दोष भी है कि वह अकुशल कर्मों के पीछे भागता रहता है। पाप कर्म करनें में उसकी प्रवृत्ति होती है। इन्हीं अकुशल कर्मों तथा पापों से चित्त में विरति उत्पन्न करने के लिये शील पारमिता की आवश्यकता होती है। प्राणातिपात समग्र पापों से चित्त की विरति शील कहलाती है।[3] विरतिचित्तता ही शील हैं, जब चित्त के समस्त दोष दूर हो जाते हैं, और चित्त पापकर्मों को करने से दूर हट जाता हैं तब शील पारमिता पूर्ण होती है।

चित्त का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक हैं, नहीं तो थोड़ी सी छूट पाकर वह केवल दोषों का ही आलम्बन बनता हैं। आचार्य शांतिदेव के अनुसार सभी भय तथा अपरिमित दुःख केवल चंचल चित्त के द्वारा ही होते हैं।[4] व्यक्ति को जितनी संख्या में दुःखों का अनुभव करना होता है, वे सभी दुःख केवल चित्त मात्र से ही उत्पन्न होते हैं। इस संसार में प्रत्येक मनुष्य का कोई न कोई शत्रु अवश्य होता है, वह शत्रु उस मनुष्य की किसी न किसी रूप में हानि करने के लिये प्रतिक्षण तत्पर रहता है, परन्तु जितनी हानि उस मनुष्य की एक शत्रु नहीं करता, उससे कहीं अधिक हानि कुमार्ग पर लगा हुआ चित्त करता है। इसलिये साधक को बिना कोई विलम्ब किये हुए शील पारमिता की साधना के लिये तत्पर हो जाना चाहिए, क्योंकि जो चित्त अत्यंत चालाक हैं, यह चित्त एकदम से कहीं भी आवागमन करता है, ऐसे चित्त की साधक को समय रहते रक्षा करनी चाहिए क्योंकि जिस चित्त की सुरक्षा की जाए, ऐसा चित्त अत्यंत सुखदायक होता है।[5]

## बोधिसत्त्व का शील पारमिता की साधना के लिये अग्रसर होना

बोधिसत्त्व जब दान पारमिता को पूर्ण करता है तो वह उसके पश्चात् अपने शील की रक्षा करता है। शील की रक्षा हेतु वह चित्त की रक्षा के लिये तत्पर होता है। इसके लिये साधक इस प्रकार सोचता है कि यह समस्त पृथिवी कंकड़ पत्थर इत्यादि है और चलने पर वे सभी पांव में कष्ट देंगे, इसलिये यदि जूतों की जोड़ी पैरों में पहन ली जाए तो इस कष्ट से मुक्ति पायी जा सकती है क्योंकि सम्पूर्ण पृथिवी को तो हम चमड़े से आच्छादित नहीं कर सकते।[6] ठीक उसी प्रकार साधक के द्वारा बाह्य पदार्थों का रुकाव नहीं हो सकता। उसे तो केवल स्वयं के चित्त को ही रोकना है, जो केवल शील पारमिता द्वारा ही संभव है। शील पारमिता का मुख्य कार्य चित्त रक्षण ही है और शिक्षा पालन के इच्छुकों को प्रयत्न करके चित्त की रक्षा करनी चाहिए क्योंकि चित्त की विरति के बिना बुद्ध की शिक्षाओं का पालन करना सम्भव नहीं हैं। सांसारिक विषयों को रोकना अत्यधिक कठिन है। चित्त का विरोध भी अति दुष्कर कार्य है, परन्तु शील पारमिता के अभ्यास से यह दुष्कर कार्य बड़ी सफलता से पूर्ण हो जाता है। शील पारमिता साधक को अकुशल कर्मों के निकट जाने का अवसर प्रदान नहीं करती हैं। शील पारमिता ही साधक को हिंसक प्रवृत्तियों से बुरे आचरण से दूर रखती है। शील से ही साधक का स्वभाव विनम्र होता है, तथा समस्त सत्त्वों के लिये उसके हृदय में करुणा भाव भी विद्यमान रहता है। इसलिये बोधिसत्त्व को शील पारमिता का आचरण प्रत्येक स्थिति में करना चाहिए।

## शील पारमिता द्वारा बोधिसत्त्व के चित्त की रक्षा

बोधिसत्त्व द्वारा शील पारमिता तभी पूर्ण होती है, जब वह स्मृति तथा सम्प्रजन्यय की रक्षा करता है।

चित्तं रक्षितुकामानां मयैष क्रियतेऽञ्जलिः।
स्मृतिं च सम्प्रजन्यं च सर्वयत्नेन रक्षत।।[7]

अर्थात् चित्त की रक्षा करने वालों से मैं हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूँ। यदि वे सभी चित्त की रक्षा करना चाहते हैं, तो सभी प्रकार के प्रयत्नों से केवल स्मृति और सम्प्रजन्य की रक्षा करनी चाहिए क्योंकि जिस प्रकार रोग से ग्रस्त व्यक्ति कोई भी कार्य करने योग्य नहीं रहता ठीक उसी प्रकार स्मृति तथा सम्प्रजन्य से रहित चित्त किसी भी काम के योग्य नहीं रहता।[8]

**स्मृति** : विहितप्रतिषिद्धयोर्यथायोगं स्मरणं स्मृतिः।[9] अर्थात् विहित तथा प्रतिषिद्ध कार्यों का स्मरण करना स्मृति हैं। इस संसार में जन्म लेने पर मानव को कौन सा कार्य करना है तथा किस कार्य को करने से विरत रहना है। इन्हीं दोनों कार्यों को ध्यान में रखना संक्षेप में स्मृति कहा जाता हैं। सत्त्वों का हित इत्यादि विहित कर्म है तथा हिंसा इत्यादि निषिद्ध कर्म हैं। इन्हें अपनी साधना करते समय ध्यान में रखना चाहिए।

अथासनगतस्थान प्रेक्षित व्याहृतादिषु।
संप्रजानन क्रियाः सर्वाः स्मृतिमाधातुमर्हसि।।[10]

बैठते हुए, मार्ग में गमन करते हुए, दृष्टिपात करते हुए, अन्य दूसरे कार्यों को करते हुए, सभी प्रकार के कार्यों को सही प्रकार से करते हुए स्मृति होना आवश्यक है। स्मृति मनुष्य के चित्त के द्वार पर द्वाराध्यक्ष के समान रहती है। जिस मनुष्य की स्मृति स्थिर है। दोषों का उस पर कभी भी आक्रमण नहीं हो सकता। इसके विपरीत यदि स्मृति स्थिर नहीं है, तो क्लेश रूपी चोरों का दल ऐसे अवसर तलाशता है और सभी पुण्यों को नष्ट कर डालता है। अतः जीवन में आने वाले कष्टों का स्मरण करते हुए स्मृति को मन के द्वार से कभी नहीं हटाना चाहिए। यदि स्मृति हट भी जाए तो पुनः उसे मनोद्वार पर स्थापित करना चाहिए। जब–जब स्मृति साधक के चित्त की रक्षा पहरेदार के समान करती है तो सम्प्रजन्य स्वयं आता है फिर उसके पश्चात् वह नहीं लौटता है।[11]

## सम्प्रजन्य

जब स्मृति की पालना साधक द्वारा हो जाती है, तो उसके पश्चात् साधक को सम्प्रजन्य की रक्षा करना आवश्यक है। सम्प्रजन्य का अर्थ यदि सरल भाषा में किया जाए तो इसे प्रत्यवेक्षण[12] भी कहा जा सकता है। शरीर तथा चित्त की प्रत्येक स्थिति का प्रत्येक समय निरीक्षण करना ही सम्प्रजन्य है।

एतदेव समासेन सम्प्रजन्यस्य लक्षणम्।
यतकायचित्तावस्थायाः प्रत्यवेक्षा मुहुर्मुहुः।।[13]

संक्षेप में सम्प्रजन्य का लक्षण इसी प्रकार का कहा गया है कि निर्वाण की इच्छा वाले प्राणी को शरीर तथा चित्त को प्रत्येक क्षण टटोलना चाहिए। किसी कार्य को करते समय शरीर की स्थिति किस प्रकार की है यह □ देखते रहना चाहए।

कुत्र में वर्तत इति प्रत्यवेक्ष्यं तथा मनः।
समाधानधुरं नैव क्षणमप्युत्सृजेद् यथा।।[14]

साधक का चित्त कहाँ पर स्थित है यह □भी प्रतिक्षण देखते रहना आवश्यक है, क्योंकि वह समाधि के लिये यत्नवान नहीं हो सकता यदि वह संयत नहीं है। इसलिए साधक को काष्ठ के समान इन्द्रियविहीन रहकर कभी भी इधर–उधर व्यर्थ में दृष्टिपात नहीं करना चाहिए। प्रत्येक क्षण हमें इस प्रकार का ध्यान रखना चाहिए कि हमसे कोई ऐसा कार्य न हो जिससे सम्प्रजन्य ठीक न रहे। जब स्मृति और सम्प्रजन्य मिलकर कार्य करते हैं तभी शील पारमिता पूर्ण होती है और चित्त की रक्षा का कार्य पूर्ण होता है।

## वर्तमान युग में शील का ह्रास

इस संसार में आजकल जो समय चल रहा है। वह हिंसा का ही प्रतीत होता हैं। प्राणियों की तो क्या एक राष्ट्र की भी अन्य राष्ट्र के प्रति जो भावना है, वह भी हिंसा से परिपूर्ण है। समाज में रहने वाले प्रत्येक मानव को स्वयं से भिन्न अन्य मानवों तथा प्राणियों के साथ हिंसा का व्यवहार करने में ही सुख प्राप्त होता है। वह न तो स्मृति का पालन करता है न ही सम्प्रजन्म का। कौन से कर्म करणीय है, तथा कौन से निषिद्ध कर्म है। इस तथ्य का भी वह ध्यान नहीं रखता। वह तो केवल अपना ही हित साधना चाहता है। जिससे शील का ह्रास होता रहता है। वर्तमान समय में यदि हमें मानवता को और अधिक शर्मसार होने से बचाना है तो हमें शील पारमिता का अभ्यास करना होगा।

## आधुनिक समय में शील पारमिता की उपयोगिता

वर्तमान समय में जिस प्रकार मानव स्वार्थ की अंधी दौड़ में दौड़ रहा है, तथा पाप में ही उसका जीवन व्यतीत हो रहा है। ऐसे समय मे मानव समाज को शील पारमिता के अभ्यास की अत्यंत आवश्यकता है। शील पारमिता के अभ्यास से मनुष्य का चित्त पाप इत्यादि से विरत हो जाएगा। ऐसा प्राणी समाज में एक नयी चेतना तथा एक नये विश्वास को जन्म देगा। वह समाज को दर्पण दिखाएगा कि बिना पाप कर्म किये हुए भी इस संसार में अपना जीवन निर्वाण हो सकता है। शील पारमिता को जीवन में उतारकर मनुष्य स्वयं पर दूसरे मनुष्य का विश्वास फिर से अर्जित कर सकता है, क्योंकि शील ही परम ज्ञान है, शील ही परम मोक्ष है। शील ही परम धर्म है, शील से ही मोक्ष की प्राप्ति होती है।[15] इसलिये आज के सन्दर्भ में प्रत्येक मनुष्य को शील का अभ्यास करना चाहिए।

निष्कर्ष–: इस संसार में केवल मानव ही है, जिसके पास विवेक की शक्ति है। परन्तु मानव स्वार्थ को लक्ष्य मानकर कार्य करता है। इस स्वार्थ के कारण वह अन्य प्राणियों को हानि पहुंचाता है तथा पाप का भागीदार भी बनता है। मानव पुण्यकर्मों से दूर भागता रहता है और पाप कर्मों को साधने में लगा रहता है। यदि वह शील पारमिता का अभ्यास करे तो समस्त पापों से वह विरत हो सकता है। स्मृति तथा सम्प्रजन्य पापों को उसके निकट नहीं आने देंगे। मानव की प्रवृत्ति सात्विक हो जाएगी। जिससे वह इस वर्तमान समाज को नयी दिशा में ले जा सकता है। जब मानव की हिंसा की प्रवृत्ति समाप्त हो जाएगी। तो वह अन्य प्राणियों से भी द्वेष भाव नहीं रख पाएगा।

## सन्दर्भ ग्रन्थ


1. मिलिन्द प्रश्न (हिन्दी भाग) पृष्ठ–90, द्वारिकादास शास्त्रि, वाराणसी–1990
2. लंकावतारसूत्रम् 10.185
3. बोधिचर्यावतार, भूमिका, पृष्ठ–29, द्वारिकादास शास्त्री, 1988
4. यस्माद्भयानि सर्वाणि दुःखान्यप्रमितानि च ।
5. चित्तादेव भवन्तीति कथितं तत्त्ववादिना।। वहीं,5.6
6. धम्मपद,चित्तवग्गो, कारिका–36
7. बोधिचर्यावतार,5.13
8. वहीं, 5.23
9. वहीं, 5.24
10. वहीं, (पंजिका) पृष्ठ–82
11. सौन्दरनन्द, 14.35, सूर्यनारायण चौधरी, संस्कृत–भवन, कठौतिया (बिहार) 1948
12. सम्प्रजन्य तदायाति न च यात्यागतं पुनः।
13. स्मृतिर्यदा मनोद्वारे रक्षार्थमवतिष्ठते।। बोधिचर्यावतार 5.33
14. बौद्ध–धर्म–दर्शन, पृष्ठ–191, आचार्य नरेन्द्र देव, मोतीलालबनारसीदास, दिल्ली
15. बोधिचर्यावतार, 5.108
16. वहीं, 5.41
17. बुद्धचरितम्, 26.34